P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-6* ISSUE-7* (Part-1) March- 2019
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

जनकवि नागार्जुन

सारांश

साहित्य रचना के मूल में सृजनात्मक प्रेरणा कार्य करती है। साहित्यकार विभिन्न उतार–चढ़ाव की परिस्थितियों से प्रभावित होकर साहित्य रचना में तल्लीन होता है। वह बौद्धिक क्षमता के साथ कल्पना का प्रयोग कर भावनाओं को अभिव्यक्त करता है। अतीत और वर्तमान से वह समाज के लिए आवश्यक परिवर्तन को लेता है। कवि विभिन्न आर्थिक, सामाजिक, राजनैतिक, सांस्कृतिक तथा वैचारिक संदर्भो से संवेदनशील होकर काव्य रचना में प्रवृत होते है हिंदी का प्रगतिशील साहित्य विभिन्न विचारधाराओं देशी तथा विदेशी साहित्यकारों, समीक्षकों द्वारा स्वीकृत मार्क्सवादी आधार पर विकसित साहित्य है। इन मान्यताओं द्वारा हिंदी साहित्य के वस्तु और शिल्प को विशिष्ट दिशा मिली। प्रगतिशील रचनाकार साहित्य और कला को जीवन में वास्तविक और व्यापक परिवर्तन लाने वाले साधन के रूप में देखते है तथा मानवमात्र के लिए कल्याणकारी दृष्टिकोण लेकर चलते है।

प्रगतिशील कवि नागार्जुन जनता के साथ जीवित रहने के लिए संघर्ष शील होते हैं। वे प्रत्येक परिस्थिति में जनता के साथ हिस्सेदारी चाहते है। भारतीय मानस की अवस्थाओं का चित्रण नागार्जुन ने अपने अनुभव के खरेपन के साथ व्यंग्य के माध्यम से किया है। ये नए भारतीय समाज के नवनिर्माण के आकांक्षी है इनकी कल्पनाओं का चेहरा जमीनी हैं। ये कविता को जीवन का अनुवाद मानते है। नागार्जुन अपनी कविताओं से चुनौती पेश करने वाले कवि हैं। वे देश के निरक्षर/निरन्न जनता के संघर्ष और उसकी परंपरा से जुड़े है।

मंजुला शर्मा
असिस्टेंट प्रोफेसर,
हिन्दी विभाग,
टी.डी.बी. कॉलेज,
रानीगंज

मुख्य शब्द : साहित्य, सृजनात्मकता, जनता, संघर्ष, नवनिर्माण।

प्रस्तावना

नागार्जुन भारतवर्ष के कवि है। वे इस देश के कवि है वे अपनी कविताओं में उन शोषक शक्तियों का विरोध करते हैं। जो निम्न मध्य वर्ग जिंदगी के फटेहाल के कारण है। वे उस अभिजात मानसिकता का विरोध करते है जो मामूली आदमी की उपेक्षा करती है। नागार्जुन पूंजीवाद, साम्राज्यवाद, सम्प्रदायवाद आदि के विरोधी है। वे प्रतिबद्ध हैः–

संकुचित 'स्व की आपधापी के निषेधार्य.....
अविवेकी भीड़ की 'भेड़िया – घसान के खिलाफ.....
अंध वधिर व्यक्तियो को सही राह बतलाने के लिए.....
अपने आप को भी 'व्यामोह से बारम्बार उबारने की खातिर....
प्रतिबद्ध हूँ, जी हां शतधा प्रतिबद्ध हूँ। (प्रतिबद्ध हूँ)[1]

विश्वनाथ प्रसाद तिवारी के अनुसार " नागार्जुन की प्रतिबद्धता जड़ प्रतिबद्धता नहीं है ..... दलीय प्रतिबद्धता कवि के विराट संवेदनशील व्यक्तित्व के सामने संकीर्ण और छोटी पड़ जाती हैं। कवि के भीतर एक पूरा जन समुद्र लहराता रहता है हांफता दहाड़ता उद्वेलित होता, फुफकारता, फन पटकता। उसके संवेदनशील मन में परिवेश का हर कम्पन दर्ज होता रहता है।[2] नागार्जुन को गाँव से बिछड़ने की पीड़ा सालती रहती है उन्हें अपने गाँव का बरसात याद आता हैः

"भर गयी होगी अरे वो वाग्मती की धार...
उगे होंगे पोखरों में कुमुद पदम् मखान" [3]

(ऋतु सन्धि)

उनकी कई कविताये जैसे 'सिंदूर – तिलकित भाल', बहुत दिनों के बाद, एक मित्र को पत्र उनके ग्राम – प्रेम को व्यक्त करता है। कवि धरती को माँ के रूप में देखते हुए युद्ध के विनाश लीला के विरूद्ध है :–

"सुनो हे वज्रपाणि युद्धव्यसनी दानव
सुनो हे अशोभन अमंगल अवायु
तुम्हारा अपावन स्पर्श नहीं चाहती
अहल्या कल्याणी चिरकुमारी धरती[4]

'प्रेत का बयान' कविता में नागार्जुन भूख सें मरे प्राइमरी स्कूल अध्यापक द्वारा स्वाधीन भारत के 'गरीबी हटाओ' पर तीव्र एवं करुण व्यंग्य करते है; –

एक नहीं, दो नहीं, नौ – नौ महीने!
धरनी थी, माँ थी, बच्चे थे चार
आ चुके है वे भी दया सागर करुणा के अवतार
. आपकी ही छाया में
मैं ही था बाकी
क्योंकि करमी थी पत्तियां अभी कुछ शेष थी
हमारे अपने पुश्तैनी पोखर में
मनोबल शेष था सूखे शरीर में .....

वही 'अकाल और उसके बाद' कविता की **पंक्तियाँ:–**

दाने आये घर के अंदर कई दिनों के बाद
धुआँ उठा आँगन से ऊपर कई दिनों के बाद
चमक उठी घर भर की आँखे कई दिनों के बाद
कौवे ने खुजलाई पाँखे कई दिनों के बाद। [6]

ए. अरविंदाक्षन के अनुसार '' नागार्जुन का कविता संसार इतना विस्तृत है कि उसमे भारतीय मानस की कई अवस्थाये खुलती नजर आती है। परिधियों को तोड़ने की यह प्रवृत्ति नागार्जुन ने अनुभव के खरेपन से प्राप्त की जिसके लिए वे व्यंग्य का माध्यम अपनाते है। सहज अनुभवों की सहज कविता युग ही क्यो, भाषायी परिधि को भी तोड़ती है।''[7] स्वयं नागार्जुन अपने लेखन को इन शब्दों में स्पष्ट करते है, ''मुझे संघर्षशील जनता का विपन्न बहुलांश ही शक्ति प्रदान करता है। कोटि – कोटि भारतीयों के वे निरीह, पिछड़े हुए ,अकिंचन दुर्बल समुदाय जो चाहने पर भी अपना मतपत्र नहीं डाल पाए, मेरी चेतना उनकी विवशताओं से ऊर्जा हासिल करेगी।''[8]

तरौनी (दरभंगा) के दरिद्र ब्राह्मण परिवार में जन्मे बालक वैधनाथ के मन में पाखंडपूर्ण, हृदयहीन सामाजिकता के प्रति विरोधभाव के साथ समस्त धर्मो से ऊपर मानवीय धर्म का मूलमंत्र रहा।

नागार्जुन की रचनाशीलता के सन्दर्भ में विजय बहादुर सिंह का व्यक्तव्य है ''नागार्जुन की प्रगतिशीलता अकस्मात् नहीं, फूट पडी थी वह राष्ट्रीय आंदोलनों आर्य समाजी प्रभावों, समाजवादी नेतृत्व वाले जनांदोलनो से एक सहज पके के रूप में फूटी थी। इसलिए वे चुने चुनाये विषयो पर न लिखकर अपने अनुभूत दायरे में ही काम कर रहे थे। '' जिस समाज के पास न कोई बहुत बढ़िया और बड़ा सपना है। न ही, कोई अपना सगा चिंतक। नागार्जुन इसी समाज के प्रतिनिधि कवि के रूप में अपना दायित्व ग्रहण कर रहे थे। नागार्जुन हिंन्दुस्तान की जनता के लिए लिखते है वे कविता लिखते ही नहीं जीते भी है। कवि ने 'मन्त्र' कविता का पाठ किया :–

''ओ छू: छू: फू: फू: फट फिट फुट
ओं/शत्रुओ की छाती पर लोहा कुट'' (मन्त्र)[10]

'घिन तो नहीं आती है'? कविता में कलकत्ता के सड़क पर चलती ट्राम में जब बाबू लोग चढ़ते है, तो नागार्जुन कह उठते है :–

''दूध सा धुला सादा लिबास है तुम्हारा
निकले हो शायद चौरंगी की हवा खाने
वैठना था पंखे के नीचे, अगले डब्बे में
ये तो बस इसी तरह
लगाएंगे ठहाके, सुरती फाँकेंगे
भरे मुँह बातें करेंगे अपने देश – कोस की
सच सच बतलाओ
अखरती तो नहीं इनकी सोहबत ?
जी तो नहीं कुढ़ता हैं,?
घिन तो नहीं आती है''?
(घिन तो नहीं आती है'')[11]

लोक – जीवन के कवि नागार्जुन की कविता में गांव जीवित हो उठा है–

बहुत दिनों के बाद
अबकी मैंने जी भर भोगे
गंध – रूप – रस – शब्द – स्पर्श सब साथ – साथ इस भू पर (बहुत दिनों के बाद) [12]

विश्वनाथ प्रसाद तिवारी के शब्दों में नागार्जुन एक लोकोन्मुखी कवि है और लोक चेतना को चित्रित तथा जागृत करना उनका लक्ष्य है। लोक – जीवन और लोकमन को जितनी आत्मीयता से नागार्जुन ने व्यक्त किया हैं, किसी दूसरे आधुनिक हिंदी कवि ने नहीं वे स्वयं लोक के विभिन्न स्तरों से गुजरे हुए कवि है देखा और भोगा है उन्होंने उन स्थितियों को, उस समूचे जीवन और भाषा परिवेश को। इसलिए उनकी कविता अपने पूरे विन्यास में छंद, लय, तुक हर दृष्टि से लोकजीवन की सच्ची कविता है। वे भारतीय मिटटी से जुड़े जनता के कवि है।[13]

घुमंक्कड प्रवृति के नागार्जुन ब्राह्मण कुल में जन्म लेकर भी ब्राह्मण नहीं है। बुद्ध शरणम् जाकर भी बौद्ध नहीं है, वे लक्षमी को सम्बोधित कर व्यंग्य करते है :–

जय जय हे महारानी
दूध को करो पानी
आपकी चितवन है प्रभु की खुमारी
महलों में उजाला
कुटियो पर पाला
कर रहा तिमिर प्रकाश की सवारी [14]

नागार्जुन यह अनुभव कर चुके थे कि समकालीन जीवन में धर्म की कोई प्रगति'शील समाजिक भूमिका नही रह गयी है। धर्म धनिक लोगों की सम्पदा और साधारण लोगों की विपदा से जुडी हैं। धर्म द्वारा जनसंघर्ष कुंठित होता है और भेदभाव तथा अन्याय – उत्पीड़न की भावना बढ़ती है।

परिधि यह संकीर्ण इसमें ले न सकते साँस
गलें को जकडें हुये हैं भय – नियम के फाँस
पुराने आचार और विचार
गगन में निहारिकाओं को न करने दे रहें **अभिसार''**
(कल्पना के पुत्र हे भगवान) [15]

कवि की जातीय भावना और राष्ट्रीय चेतना उनके श्रमिक वर्गीय दृष्टिकोण से जुडी हैं। कलकत्ते में कुली–मजदूरों के कत्थई दांतों की मोटी मुस्कान बेतरतीब मूछों की थिरकन देखकर कवि खुश होते है। वे कठिन परिस्थितियों में भी अडिग साहस और धैर्य का परिचय देते हैं। वें समझते हैं जब तक संगठित होकर मजदूर किसान संघर्ष न चलाएँगें तब तक ऐसी ही दशा बनी रहेगी। वे अपनी भूमिका पर विचार करतें हैं –

जनता मुझसें पूछ रही हैं क्या बतलाउं?
जनकवि हूँ मैं साफ कहूंगा क्यों हकलाउ?[16]

इसी प्रकार इनकी एक प्रसिद्ध कविता है– (आओ रानी हम ढायेगें पालकी) जिसमें भारत की गरीबी औंर बदहाली उत्तरदायी ब्रिटेन की नीतियों और उसी ब्रिटेन से भारत के नेताओं के मैत्री की चर्चा की गई है। शासन की बंदूक कविता में वे लिखतें हैं–

जली पर बैठकर ठुँठ कोकिला कूक
बाल न बाँका कर सका शासन की बंदूक [17]

खुरदरें पैर कविता में दूधियां निगाहे स्वयं नागार्जुन की है–

देर तक टकराए,
उन दिन इन आंखों से वे पैर
भूल नही पाउँगा फटी बिवाइया
खुब गई दूधिया निगाहों में
धँस गई कुसुम कोमल मन में। [18]

डा0 रामविलास शर्मा नयी कविता और अस्तित्ववाद में नागार्जुन के संदर्भ में लिखतें हैं पूँजीवादी व्यवस्था श्रमिक जनता का आर्थिक रूप से ही शोषण नही करती, वह उसके सौन्दर्यबोध को कुंठित करती उसके जीवन को घृणित और कुरूप भी बनाती है। जो चेतना मनुष्य की इस प्राकृतिक आवश्यकता को समझती हैं, वही उसे समाजिक संघर्ष में भाग लेने की प्रेरणा भी देती हैं। क्या भारत और क्या यूरुप – कहीं भी अब तक कोई बड़ा मानव – प्रेमी कवि नही हुआ जो प्रकृति का प्रेमी भी न रहा हों।''[19]

इस प्रकार कवि नागार्जुन की जनधर्मिता स्पष्ट है।

उपसंहार

जीवन संघर्षों सें जूझते हुए प्रगतिशील कवि नागार्जुन ने भारतीय जनमानस के लिए अपनी कलम चलायी। कवि नागार्जुन की प्रतिभा, गरीबी, अभाव, पीड़ा में प्रस्फुटित हुई। यह भारतवर्ष का वह कवि रहा जो अपनी कविताओं में चुनौती पेश करता है। साधरण जन की व्यथा ही इनकी कथा रही। घुमक्कड़ी प्रवृति, फक्कड़ स्वभाव के बाबा ने हमेशा भारतीय जीवन की विविधता, यहाँ के ग्रामीण समाज, कृषकों मजदूरों की वेदना को आत्मसात किया। इन्होने न केवल दीन हींन और शोषित पीड़ित जन के प्रति सहानुभूति जताया बल्कि शोषण और अंन्याय के विरुद्ध लड़ने की प्रेरणा भी जगायी। अन्याय के चेहरे खोलना, अत्याचार के कारण और तरीको को प्रकट करना, इसका विराट रूप उनके साहित्य में मिलता है। यही नहीं लोक जीवन के यथार्थ उसके अनुभव, भाषा, छंद, ताल, लय द्वारा ये अपनी कथानुभूति की संस्कृति का निर्माण करते है और इनकी कविता जन जन में लोकप्रिय हो उठती है। इनकी कवितायें दलित वर्ग के अभाव, की भी व्यंजना करती है। ये जीवन के कठोर और बेदर्द यथार्थ को लेकर उपस्थित होती है। इस प्रकार नागार्जुन भारतीय जनमानस के कवि के रूप में आज भी प्रासंगिक है।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची

1. *स. नामवर सिंह, ''नागार्जुन प्रतिनिधि कविताएँ'' : 'राजकमल प्र . नयी दिल्ली 1984' पृ0 15*
2. *तिवारी विश्वनाथ प्रसाद ,'समकालीन हिंदी कविता लोकभारती प्र . इलाहाबाद 2010' पृ0 50*
3. *स. नामवर सिंह, ''नागार्जुन प्रतिनिधि कविताएँ'' : 'राजकमल प्र .नयी दिल्ली 1984' पृ0 67*
4. *तिवारी विश्वनाथ प्रसाद , 'समकालीन हिंदी कविता : 'लोकभारती प्र. इलाहाबाद 2001' पृ0 49*
5. *स. नामवर सिंह नागार्जुन प्रतिनिधि कविताएँ'' : ' राजकमल प्र .नयी दिल्ली 1984 ' पृ0 95*
6. *वही पृ0 98*
7. *अरविंदाक्षन ए 'समकालीन हिंदी कविता : राधा कृष्ण प्र . नयी दिल्ली 1999 ' पृ0 26*
8. *सिंह विजय बहादुर 'नागार्जुन का रचना संसार' वाणी प्रकाशन नयी दिल्ली 2014' पृ0 15–16*
9. *वही पृ0 34*
10. *स. नामवर सिंह 'नागार्जुन प्रतिनिधि कविताएँ', : 'राजकमल प्र. नयी दिल्ली 1984' पृ0 112*
11. *वही पृ0 36*
12. *वही पृ0 72*
13. *तिवारी विश्वनाथ समकालीन हिंदी कविता लोक भारती प्र. इलाहाबाद 2010 पृ0 50*
14. *नागार्जुन 'हजार – हजार बाहों वाली' राजकमल प्र. नई दिल्ली 1981 पृ0 52*
15. *सं नामवर सिंह नागार्जुन प्रतिनिधि कविताएँ'' राजकमल प्रकाशन नई दिल्ली 1984 पृ0 20*
16. *नागार्जुन 'हजार – हजार बाहों वाली' राजकमल प्र. नई दिल्ली 1981 पृ0 142*
17. *जोशी राजेश ;नागार्जुन रचना संचयन' साहित्य अकादेमी नई दिल्ली 2005 पृ0 135*
18. *वही पृ0 38*
19. *शर्मा डा0 रामविलास नयी कविता और अस्तित्ववाद राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली 1993 पृ0 163*